ओ३म्

शिव कौन है

सभी प्रकार का वैदिक साहित्य प्राप्त करें
पुस्तकें डाक एवं कुरियर के माध्यम से भेजी जाती हैं

आर्य पुस्तकालय सीतापुर
ओमकार नाथ आर्य

पता- ग्राम. सेमरहन ,पोष्ट.पड़रखा
जिला.सीतापुर, (उ.प्र.)261001
मो.8376945847
omkarnath426@gmail.com

शिव कौन हैं ?

ओ३म्

हिरण्यबाहु, गणपति, पशुपति, शितिकण्ठ, कपर्दिन, व्युप्तकेश, शतधन्व, ह्रस्व, वामन, शम्भु, मयोभव, शंकर, मयस्कर, शिवतर, भूतानाम् अधिपति । वेद में हम स्पष्ट रूप से देखते हैं कि ये सभी नाम वह अर्थ नहीं देते जो आज लोक में प्रचलित हैं ।

कुछ विद्वान ऐसा मानते हैं कि वेद में उसी शिव का वर्णन है जिसके नाम पर अनेक पौराणिक कथाओं का सृजन हुआ है और उसी की पूजा-उपासना वैदिक काल से आज तक चली आती है । यहाँ तक कि शिव के अनेक नामों की व्याख्या करने के लिए ही तरह-तरह की कहानियों की रचना की गई है । ये कहानियाँ सृष्टि क्रम के विरुद्ध होने के साथ-साथ युक्ति संगत भी नहीं है । इन कहानियों से शिव का उज्जवल स्वरूप तो नष्ट होता ही है साथ ही अनेक अनर्गल क्रिया कलाप भी इससे जुड़ जाते हैं । इन कहानियों के रचयिता शिव को अजर-अमर मानते हुए भी उनका ऐतिहासिक रूप इस वीभत्सता से प्रस्तुत करते हैं कि स्पष्ट नहीं हो पाता कि हम कौन से शिव का अवलोकन कर रहे हैं ।

रामायण में शिव का वर्णन

रामायण के नाम से हम दो ग्रन्थों से विशेषतः परिचित हैं । प्रथम वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण और द्वितीय तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस । आमतौर पर तुलसीदास की रामचरितमानस को भी रामायण कह दिया जाता है जोकि गलत है । इन दोनों ग्रन्थों में महान अन्तर है । भाषा का अन्तर तो है ही, कथा का भी अन्तर है । वाल्मीकि का वृत्तान्त सत्यता के निकट है, उस पर हम पूरा भरोसा कर सकते हैं जबकि तुलसी का वृतान्त भक्ति भावना से लिखा गया मानवीय और अमानवीय कथ्यों का अजीब मिश्रण है । यह निश्चित ही नहीं हो पाता कि तुलसी दशरथ के पुत्र राम का वर्णम कर रहे हैं या संसार की नियामक शक्ति का । शिव के सम्बन्ध में भी तुलसी का वर्णन विश्वसनीय नहीं माना जा सकता । अतः हम वाल्मीकि कृत रामायण में ही देखना चाहेंगे कि उसमें कौन से शिव का वर्णन है । क्योंकि वाल्मीकि रामायण ही प्राचीनतम राम-काव्य है।

वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड में शिव का वर्णन सर्वप्रथम तेईसवें सर्ग में मिलता है । विश्वामित्र के साथ भ्रमण करते हुए राम-लक्ष्मण

जब सरयू तट पर बने एक आश्रम के विषय में उनसे पूछते हैं तो विश्वामित्र का उत्तर इस प्रकार मिलता है– "बुद्धिमानों से जो 'काम' कहा जाता है वह कन्दर्प (पहले) शरीर धारी था। यहाँ नियम पूर्वक एकाग्र हुए तपस्या करते हुए विवाह करके मरुतों के साथ जाते हुए देवेश महादेव को दुष्ट बुद्धि वाले काम ने पीड़ित किया। महात्मा शिव ने हुंकार किया। हे रघुनन्दन रुद्र की आँख से जले हुए दुर्मति (काम) के शरीर से सब अंग गिर गये। महात्मा (शिव) से जलाये हुए अंग नष्ट हुए। देवेश्वर शिव ने क्रोध से काम को शरीर–रहित किया। हे राघव उस काल से वह अनंग नाम से विख्यात हुआ। उसी (शिव) का यह पहले पुण्य आश्रम था।

इस वर्णन से इतना ज्ञात होता है कि पहले इस आश्रम में शिव नाम के कोई महात्मा तपस्या करते थे। और उन्होंने 'काम' को अपने शरीर पर किसी भी प्रकार से हावी नहीं होने दिया था। उक्त कथन के बाद यह भी कहा गया है कि वे विवाह करके जा रहे थे। यह कथन हमें असंगत लगता है। जब वे विवाह करने को प्रस्तुत ही हो गये तो निश्चित् है कि 'काम' का सेवन उन्हें करना ही होगा। जब 'काम' को शरीर रहित ही करना था तो विवाह की क्या आवश्यकता था। स्पष्ट रूप से वे शिव वेद में कहे गये शिव नहीं हो सकते। ये पूर्णतः मानवीय गुणों से युक्त हैं।

धनुष भंग के प्रसंग में जिस धनुष का नाम आता है वह जनक के किसी पूर्वज का दिया हुआ था। यह भ्रमपूर्ण कथन है कि इसका सम्बन्ध शिव से था। एक अन्य धारणा यह भी है कि रावण शिव भक्त था। जहाँ तक हमारा अभिमत है शंकर का अस्तित्व राम के समय नहीं था। अतः रावण के शिव भक्त होने का प्रश्न ही नहीं उठता। शंकर वस्तुतः महाभारत काल में ही थे इनका वर्णन वेदों से भी निकालना उचित नहीं है। क्योंकि वेदों में इतिहास नहीं है।

राम के विषय में भी यही धारणा लोक में प्रचलित है कि राम शिव के उपासक थे। यदि यह कहा जाय कि राम इस संसार के रचयिता शिव के उपासक थे तब तो ठीक है किन्तु यदि उस शिव का आरोपण यहाँ किया जाये, जिसका वर्णन महाभारत और पुराणों में है तो यह गलत

होगा । वस्तुतः यह घपला तुलसीदास का किया हुआ है । उन्होंने ही शिव और राम को एक दूसरे का उपास्य बताकर इतिहास क्रम को दूषित किया है । अक्सर राम के द्वारा सेतु–बन्धन का उदाहरण दिया जाता है और कहा जाता है कि इस अवसर पर राम द्वारा शिवलिंग की स्थापना की गई और आज उसी स्थान पर रामेश्वरम का मन्दिर विद्यमान है । वाल्मीकि रामायण से यह प्रमाणित नहीं होता । वस्तुतः यह मन्दिर ११वीं शती का निर्माण है और एक दक्षिण भारतीय राजा रामचन्द्र ने इसका निर्माण कराया था इसीलिये इसका नाम रामेश्वरम पड़ा है । यह राजा शिव का उपासक था ।

रावण किसका उपासक था इसकी विवेचना हम किसी अन्य लेख में करना चाहेंगे ।

महाभारत के शिव

महाभारत में हम जिस शिव का वर्णन पाते हैं वे ऐतिहासिक पुरुष हैं और काफी हद तक मानवीय भावनाओं से ओतप्रोत है । वस्तुतः ये भूटान के राजा थे जो उस समय भूतस्थान के नाम से प्रसिद्ध रहा होगा जो बाद में भूतान अथवा भूटान हो गया । इस प्रदेश के रहने वालों को आज भी भोट या भोटिया कहते हैं जो भूत और भूतिया के अपभ्रंश हैं । पूर्वकाल में इस प्रदेश पर देवों का आधिपत्य हो चुका था । इस प्रदेश के मूल निवासियों और देवों के मिश्रण से ही इस जाति का उद्‌भव हुआ था । भूतों के राजा होने के कारण ही शिव के नाम भूतपति, भूतेश, भूतनाथ आदि कहे गये हैं । इन्हें महादेव भी कहा गया है ।

यद्यपि आज का भूटान एक छोटा सा प्रदेश है तथापि प्राचीन काल में यह प्रदेश काफी बड़ा था । यही कारण है कि महादेव की गद्दी कैलाश पर्वत पर थी और वहीं से वे भूत तथा पिशाच जाति पर शासन करते थे । पहाड़ों के राजा होने से इन्हें गिरीश भी कहा है । इनकी पत्नी पार्वती है अर्थात् पहाड़ी स्त्री । पहाड़ी राजा का विवाह पहाड़ी स्त्री से होना स्वाभाविक ही है ।

महाभारत के कुछ प्रसंग ऐसे हैं जो इन्हें स्पष्टतः ऐतिहासिक पुरुष सिद्ध करते हैं । अर्जुन पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए हिमालय पर जाते हैं । यह अस्त्र शिव से ही प्राप्त होना था । शिव उनकी परीक्षा

लेकर ही अस्त्र उन्हें प्रदान करते हैं। एक और प्रसंग में शंकर का युद्ध कृष्ण से होता है। बाणासुर की पुत्री उषा का विवाह कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ था इसी संदर्भ में बाणासुर का युद्ध कृष्ण से हुआ और शंकर बाणासुर के सहायक हुए इस युद्ध में शंकर की हार हो गई।

शंकर को क्रतु–ध्वंसी भी कहा गया है। यज्ञ का विनाश करने वाले। यह कार्य कोई स्वधर्मी नहीं कर सकता। हम देखते हैं कि महादेव सदैव असुरों और राक्षसों की सहायता करते हैं। बाणासुर जैसे अनेक राक्षसों को महादेव से सहायता मिलती थी और प्रबल होकर वे भारतवासियों को सताते थे। प्रारम्भ में ये न तो देवों के पक्षपाती थे और न आर्यों के सहायक अपितु स्वतन्त्र रूप से अपना राज्य चलाते थे। किन्तु विष्णु के प्रयत्न से इन्हें अनेक बार असफलता प्राप्त हुई और अपने अन्तिम दिनों में ये देवों के सहायक बन गये।

सांस्कृतिक दृष्टि से हम देखें तो पता लगेगा कि इनकी सभ्यता काफी पिछड़ी हुई थी। जिस समय विष्णु रेशमी पीताम्बर धारण करते थे, साधारण भारतीय सूती वस्त्र का प्रयोग करते थे वहां भूतों के राजा शंकर कच्चे चमड़े के वस्त्र ही पहनते थे। जब राजा ही कच्चा चमड़ा पहनता हो तो उसकी प्रजा का क्या हाल होगा।

पुराणों के शिव

पुराणों के शिव का रूप बहुत ही विकृत है। स्वयं शिवजी की उत्पत्ति। उनके पुत्रों की उत्पत्ति आदि भी अत्यन्त काल्पनिक है। हम यहाँ गणेश की उत्पत्ति पर भी थोड़ा सा विचार करें तो स्थिति स्पष्ट हो सकती है। शिवजी जब घर से बाहर गये थे तो पार्वती ने स्नान करने का विचार किया। उन्हें द्वार पर रक्षक की आवश्यकता हुई तो हथेली रगड़ कर एक बालक को उत्पन्न किया और द्वार पर बैठा दिया। जब शंकर आये तो इस बालक ने उन्हें रोकना चाहा। शंकर को यह बर्दाश्त नहीं हुआ कि कोई उन्हें उनके ही घर में न घुसने दे। फलतः शंकर के त्रिशूल से इस बालक का मस्तक कट गया। पार्वती को जब ज्ञात हुआ तो उन्होंने विलाप करना प्रारम्भ कर दिया। यह समाचार जब विष्णु को मिला तो उन्होंने अपने चक्र से एक नवजात

गज–शिशु का मस्तक काटकर उस बालक की गर्दन पर लगा दिया । यही बालक गणेश हुआ ।

इस कथा में ऐतिहासिकता इतनी भर है कि शिव के पुत्र गणेश थे । शेष भाग तर्क रहित और असम्भव है । हम जानते हैं कि हथेली की रगड़ से कोई सन्तान उत्पन्न नहीं होती । पार्वती यदि ऐसा कर सकती थी तो उसे शिव से विवाह करने की आवश्यकता ही नहीं थी । इधर शिव को पता नहीं चल सका कि यह मेरा ही पुत्र है । कैसे अन्तरयामी थे वे ? उनका क्रोध तो हद को भी पार कर गया । किसी बालक का मस्तक काट देना क्या विवेकहीनता नहीं है ? उसे तो बाँधा भी जा सकता था । शिव से अधिक बलवान भी उसे नहीं कहा जा सकता। पार्वती भी दुबारा हथेली रगड़ कर बालक बना सकती थी ।

बालक धड़ पर हाथी के बच्चे का सिर जोड़ना किसी भी प्रकार युक्ति संगत नहीं है । प्रथम तो इसमें भूल यही है कि उसी बालक का सिर क्यों नहीं जोड़ा गया, वह तो वहीं पड़ा रह गया । उसे ढूँढने की आवश्यकता नहीं होती । वह नहीं तो किसी अन्य बच्चे का सिर लगाया जाता किन्तु उन्हें तो हाथी के बच्चे का सिर लगाना था । हमारी इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि हाथी का बच्चा कितना ही छोटा हो उसका सिर किसी मानव–शिशु की गर्दन पर सही नहीं बैठ सकता ।

पौराणिक कथाओं में इसी प्रकार की अनेकों विसंगतियाँ भरी पड़ी हैं जिनका कोई युक्तिपूर्ण समाधान नहीं है ।

इसके अतिरिक्त पुराणों में शिव पार्वती के काम–सम्बन्ध की चर्चा इतनी खुलकर की गई है कि वह अश्लीलता की हद को भी पार कर गई है । उसे हम यहाँ लिखना भी नहीं चाहते । पुराणों के अध्ययन कर्ता स्वयं ही यह सब जानते हैं और इन प्रसंगों की अश्लीलता पर लीपापोती करने के लिए इनकी आध्यात्मिक व्याख्या प्रस्तुत करने का भरसक प्रयास करते रहते हैं । किन्तु सत्य छिपता नहीं । आज शंकर–पूजा लिंग–पूजा में परिवर्तित हो चुकी है । यह असभ्यता का प्रतीक है । भारतीय इतिहास के मध्यकाल में जब वाम मार्ग का आविर्भाव हुआ तो लिंग–पूजा का अत्यधिक प्रचार और प्रसार हुआ । फलतः भारतीय आध्यात्मिकता अपने

अधःपतन को प्राप्त हो गई। दूसरी ओर भारत पर अनेकों विदेशी आक्रमणों ने भी इस कार्य में सहयोग दिया। विदेशियों के मिथ्या विश्वास भी भारतीय जन जीवन में घुसपैंठ कर गये और इस पतन में सहायक हुए।

साकार शिव - हिमालय

हमारी सम्मति में आज हम जिस शिव की पूजा अर्चना करते हैं वह वस्तुतः हिमालय पर्वत और हिमालय निवासी शिव, दोनों का मिला जुला वर्णन है। मध्य-कालीन कवियों और लेखकों ने अपने साहित्य में चमत्कार प्रदर्शित करने के लिए ही इन दोनों का मिश्रण किया होगा। हम समझते हैं मिश्रण कोई अच्छी बात नहीं है जबकि इसके परिणाम दूरगामी हों। एक बात यह भी है कि कविता की समझ सभी को नहीं होती। मूढ़ मन तो लिखी हुई हर बात को पत्थर की लकीर समझता है। फिर यदि संस्कृत में लिखा हो तो वह उसे ब्रह्म वाक्य ही लगता है। वह उसे अक्षरशः सत्य मानता है। आज भोली भाली जनता इसी मिश्रित साहित्य के कारण दिग्भ्रमित होती है और शिव को समझने में असमर्थ रहती है।

आइये कुछ ठोस आधारों पर इसकी विवेचना करें। किसी भी मानव आकृति को हम शिव का रूप देना चाहें तो कुछ बातों पर विशेष ध्यान देना होगा। उस आकृति में जटा जूट में ऊपर अर्धचन्द्र रखा होना चाहिए। जटा जूट से गंगा निकलनी चाहिए, माथे पर त्रिपुण्ड, तीसरा नेत्र, गले में सर्पमाल, हाथ में त्रिशूल, वस्त्र के नाम पर बाघम्बर। इतना काफी है किसी मानव आकृति को शिव बनाने के लिए हम आजकल भी इन्ही विशेषताओं से युक्त शिव का चित्र देखते हैं। चित्र में कुछ बातें तो साधारण ही होती हैं जैसे माथे पर चन्दन लगाना। सिर पर जटा-जूट होना, हाथ में त्रिशूल, गले में सर्प माला और वस्त्र के नाम पर बाघम्बर पहनना कोई विशेष बातें नहीं हैं, इन्हें कोई भी कर सकता है। किन्तु तीन बातें अवश्य ही विचारणीय हैं। सिर पर चन्द्रमा धारण करना, जटाजूट से गंगा का निकलना और त्रिनेत्र होना। ये तीन विशेषताएँ इन्हें अन्य मानवों से अलग करती हैं।

उक्त तीनों विशेषतायें हिमालय से सम्बन्ध रखने वाली हैं अतः स्पष्टतः शिव का वास्तविक रूप हिमालय ही है। देखें यह किस प्रकार है।

जिन लोगों ने हिमालय पर्वत श्रेणियों को प्रत्यक्ष देखा है वे इसे आसानी से समझ सकते हैं । कल्पना कीजिए कि अर्धचन्द्र जिस समय ऐसी स्थिति में हो कि वह हिमालय पर्वत के पृष्ठ भाग में इतनी ऊंचाई पर हो कि वह पर्वत को छूता हुआ सा लगे तो ऐसा ही लगेगा मानो यह पर्वत पर रखा हुआ है । यही दृश्य जटाजट पर चन्द्रमा के रखे होने का आधार है ।

दूसरा प्रबल प्रतीक है गंगा का सिर से निकलना । सभी जानते हैं कि गंगा हिमालय पर्वत से ही निकलती है और फिर वहाँ से निकलकर विचरण करती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है । जटाजूट की कल्पना हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं में की गई है । यही शिव के मस्तक से गंगा का निकलना है । यद्यपि इस प्रसंग में अनेकों कथायें गढ़ी गई हैं । अनेकों व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं किन्तु वे तर्क संगत नहीं हैं ।

तीसरी विशेषता है शिव का त्रिनेत्र होना । यह नेत्र वैसे तो बन्द रहता है किन्तु शिव जब नृत्य करते हैं तभी यह खुलता है । शिव के ताण्डव से पृथ्वी कम्पायमान हो जाती है और सर्वत्र विनाश लीला प्रारम्भ हो जाती है । ताण्डव नृत्य विनाश का सूचक है । कल्पना कीजिए कि हिमालय का समूचा प्रदेश कम्पन करने लगे और ज्वालामुखी के रूप में अग्नि वर्षा आरम्भ कर दे तो प्रलय काल ही उपस्थित हो जाएगा । कितना विनाश होगा यह कल्पनानीत है ।

शंकर के गले में सर्प माला भी रहती है । यह दृश्य भी हिमालय पर देखने को मिल सकता है । जिस समय हिम श्रृंगों को बादल वलय के आकार में घेर ले तो यही प्रतीत होगा कि यह शिव रूपी हिमालय की गर्दन की माला हैं । वेद में बादल के लिए अहि शब्द भी प्रयोग हुआ है और लौकिक संस्कृत में इसे सर्प का पर्याय देखते हैं । अतः इसमें सर्प की कल्पना की गई । क्षण-क्षण आकार बदलने के कारण गतिशील भी रहता है । यही इसकी सर्पशीलता है ।

शंकर की पत्नी का नाम पार्वती प्रसिद्ध है । पार्वती का अर्थ पर्वत पर उत्पन्न होने वाली वनस्पति से भी है । हिमालय के सन्दर्भ में हम इसके स्पष्टीकरण के लिए कुछ मध्यकालीन चित्रों का अवलोकन करें

तो पायेंगे कि पार्वती को शंकर की गोद में बैठा हुआ चित्रित किया गया है । इसे हम केवल मानवीय चित्रण की दृष्टि से देखें तो कुछ अच्छा नहीं लगेगा कि पति पत्नी को इस प्रकार चित्रित किया जाय । किन्तु इसकी संगति हम हिमालय के साथ उस पर फैली हुई वनस्पति से लगायें तो बात स्पष्ट हो जाती है । इस सन्दर्भ में हमें 'वैदिक सम्पत्ति' के पृष्ठ १९५ पर लिखित एक पंक्ति का स्मरण हो आता है । लिखा है "हम देखते हैं कि हिमालय रूपी शंकर की गोद में वनस्पति रूपी पार्वती अधिकता से विद्यमान है ।"

शिव को अजर-अमर कहा गया है । कम से कम मानव जाति के लिए तो हिमालय भी इसी कोटि में आता है । अपनी ऊंचाई और विशालता के आधार पर इसका सर्वप्रथम उद्भूत होना अवश्यम्भावी है । इसके विषय में 'वैदिक सम्पत्ति' के पृष्ठ १९३ पर हम पढ़ते हैं- "जो पहाड़ जितना ही ऊंचा होता है, उसके फैंकने वाली अग्नि, प्रपात की शक्ति भी उतना ही अधिक बलवान होती है । हिमालय सबसे विशाल और उच्च है, इसलिए उसको बनाने वाली शक्ति भी समस्त त्रपात शक्तियों से प्रबल, थी । इतनी बड़ी महान शक्ति संचित रूप से तभी मिल सकती है । जब वह बिल्कुल ही अक्षुण्ण रही हो । और यह तो निर्विवाद है कि ऐसी शक्ति सृष्टि के आदि में ही मिल सकती है । इससे अनुमान करना सरल हो जाता है कि पृथ्वी का सर्वोच्च हिमालय पहाड़ ही सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ ।"

हिमालय ही कल्याणकारी होने से शंकर भी है । अनेकों नदियाँ हिमालय से निकलकर हमें जीवन प्रदान करती हैं अतः वह प्रजापति भी है ।

संसार की समस्त प्राचीन सभ्यतायें भी हिमालय को किसी न किसी नाम से जानती हैं । हिमालय का एक नाम मेरु भी है इसे ही ईरान में 'मौरु,' यूनान में 'मेरोस' दक्षिणी तुर्किस्तान में 'मेरुव', मिश्र में 'मेरई' और असीरिया में 'मोरुख' कहा गया है । अतः निश्चित ही हिमालय हमारा आदिदेव महादेव है ।

समय-समय पर अनेक व्यक्ति शिव, शंकर, शम्भु महादेव आदि नाम के होते रहे हैं । अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम उन्हें

एक साथ मिलाकर न देखें । वेदों के शिव या शंकर निराकार प्रभु हैं जो अजन्मा और अनादि हैं । वाल्मीकि रामायण में शिव नामधारी किसी महापुरुष का नाम अवश्य आता है किन्तु यह महापुरुष महाभारत कालीन शिव से भिन्न हैं । महाभारत कालीन शिव के नाम पर ही अनेकों कथायें पुराणों में संकलित की गई हैं जिसके कारण भ्रम उत्पन्न होता है और साधारण जन उन सभी को एक ही समझकर भ्रमित हो जाते हैं । महाभारत के शिव मानवीय गुणों से सम्पन्न हैं । लिंग पूजा का सम्बन्ध भी इन्हीं शिव के साथ जोड़ दिया जाता है । हिमालय पर्वत का मानवीकरण करके भी इन्हीं शिव से मिला दिया गया और भक्ति भावना के अतिरेक में इन्हें ही देवाधिदेव परम पुरुष मान लिया गया है । इस सारे मिश्रण के कारण ही अनेक विसंगतियों का जन्म हुआ है । आवश्यकता इस बात की है कि हम उन्हें अलग–अलग करके ही देखें । स्पष्टीकरण के लिए हमने मुख पृष्ठ पर हिमालय का मानवीकरण प्रस्तुत करने का उपक्रम किया है ।

हम देखते हैं कि मानव मन सरलता की ओर दौड़ने में सदैव तत्पर रहा है अतः हम परम पिता शिव के वास्तविक रूप को जानने का कष्ट नहीं करना चाहते और अनेक निरर्थक कार्यक्रमों में लिप्त रहते हैं । केवल जड़ वस्तुओं की पूजा–अर्चना करके ही हम अपने को परम धार्मिक व्यक्ति मान लेते हैं । ईश्वर की सच्ची पूजा तो उसके वास्तविक स्वरूप को जानने में है मानने में नहीं । हम रोज ही देखते हैं कि अनेक मठ–मन्दिर हर समय भीड़ से भरे रहते हैं । प्रत्येक व्यक्ति अपने को धार्मिक समझता है फिर तो संसार की समस्त बुराइयों का नाश हो जाना चाहिए। किन्तु बुराइयाँ कम होनें का नाम नहीं लेतीं। कारण यही है कि गलत दिशा की ओर जा रहे हैं। हम परम पिता से भी यह गलत आशा करते हैं कि हम गलतियाँ करते जायँ और वह हमें क्षमा करता जाय । इसी अज्ञानवश हम एक पर एक भूल करते जाते हैं ।

इस विचार सरणि को प्रस्तुत करके हम आशा करते हैं कि सच्चे शिव को जानने में हमें अवश्य ही यह सहायक होगी । यदि ऐसा हो सका तो हम अपना परिश्रम सार्थक समझेंगे ।

परिशिष्ट

लघु पुस्तिका 'शिव कौन हैं ?' की प्रतिक्रिया हुई। जहाँ इस पुस्तिका का स्वागत हुआ वहाँ प्रतिक्रिया स्वरूप एक आलोचनात्मक पत्र भी हमें प्राप्त हुआ। पत्र पाठकों के समक्ष रखने का आशय इतना ही है कि पाठक स्वयं ही निर्णय करें कि यह प्रतिक्रिया किस प्रकार की है । पत्र इस प्रकार है–

।। श्री राम ।।

२१–३–९२

आदरणीय प्रकाशक एवं लेखक,

कल पालीवाल पार्क में भेंट हुई थी । 'भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें' पुस्तक खरीदने पर आपने जो पुस्तक 'शिव कौन हैं' भेंट दी थी, पूरी पढ़ी– और गम्भीरता से पढ़ी निष्कर्ष यही निकला कि आप लोग अव्वल दर्जे के सिरफिरे हैं; दरअसल आपके पास बुद्धि का पैमाना कम क्षमता है और आप अधिक नाप करते हैं । ठीक वैसा ही काम जैसे मसाला तौलने वाले तराजू से हिमालय तौलने का बेहूदा प्रयास। आपने शिव के सन्दर्भ में जो असंभवताऐं व्यक्त की हैं वे ठीक ऐसी हैं, जैसी लोग मारकोनी को दिया करते थे कि बेतार के उपकरण से वार्तालाप कैसे सम्भव है, किन्तु आज सब कुछ प्रत्यक्ष है तो वे मूर्ख खामोश हैं । दरअसल शिव को या किसी अन्य परमेश्वर के अवतार को समझने की बुद्धि दुर्भाग्य से परमात्मा ने आपको नहीं दी लेकिन इतना तय है कि आपके इस अनर्गल प्रलाप का असर बुद्धिमान और चिन्तवान् लोगों पर कदापि पड़ने वाला नहीं है। आप कबसे चीखते चले आ रहे हैं, किन्तु कहीं कुछ नहीं बदला । दरअसल यह हिन्दुस्तान का परम दुर्भाग्य ही रहा कि यहाँ दयानन्द जैसा आदमी जन्मा। ख़ैर, फिर भी कुछ नहीं बिगड़ा और न बिगड़ेगा। आर्य समाज अब मरणासन्न है, और ऐसा ही रहेगा, यह भी निश्चित है । संकीर्णता की हद होती है, जिसे मीरा के पद से चिढ़ हो, वह उदार क्या होगा? उदार होना मनुष्य की पहली पहचान है, अन्यथा वह पशु और दानव की श्रेणी में ही खड़ा है। होली की शुभकामनाएं, पत्र दीजिए।

भवदीय

सुनीत गोस्वामी, पत्रकार

ओ३म्

७/४/९२

श्रीयुत
सुनीत गोस्वामी, स्वस्ति ।

पत्र आपका यथा समय मिल गया था/कुछ पारिवारिक और कुछ सामाजिक कार्यों में उलझा रहा इसीलिए आपके पत्र का उत्तर तत्काल नहीं दे सका । आपने हमारी लघु पुस्तक 'शिव कौन हैं ?' के सन्दर्भ में लिखा है कि वह आपने गम्भीरता से पढ़ी।ऐसा लिखने के लिए धन्यवाद । किन्तु इससे आगे जो उपाधि हमें भेजने का कष्ट किया है उससे तो यही लगता है कि आपने उसे पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर ही पढ़ा है, उस पर विचार नहीं किया। उसकी सत्यता का आकलन नहीं किया। आपकी भेजी उपाधियों के लिए हमारे पास स्थान का भी अभाव है और उतनी पात्रता भी हमारी नहीं है अतः हम उन्हें आपको ही समर्पित करते हैं ।

पुराण वर्णित शिव के सम्बन्ध में हमने जो कुछ लिखा है उसे आप किस आधार पर काट सकते हैं ? वह कहानी बनाई ही गई है बुद्धिरहित होकर । शरीर के मैल से पुत्र बनाना । विश्व का नियन्ता होने पर शिव का अज्ञानता वश उस बालक को न पहचानना, फिर सिर काट देना । शिव पुराण में स्पष्ट लिखा है- "अंत में शिवजी को बहुत क्रोध आया और उन्होंने अपने त्रिशूल से उसका सिर काट डाला । उस बालक का सिर कटा हुआ देखकर देवता और गण शान्त हो गए ।" इसका सीधा अर्थ यही है कि वह सिर वहीं कटा हुआ पड़ा था।अगर उन लोगों में यही शक्ति थी कि वे सिर जोड़ कर उसे जीवित कर सकें तो वही सिर क्यों नहीं लगाया गया? बेचारे हाथी के बच्चे ने क्या अपराध किया था ? हाथी के बच्चे का सिर उसके धड़ पर फिट कैसे हो गया ? और पार्वती जी ने इतना तूफान क्यों खड़ा किया, दुबारा शरीर का मैल उतार कर एक बच्चा और बना लेतीं ।

मूल बात यह है कि इस प्रकार की निराधार कहानियों पर आधारित मत टिक नहीं सकता, उस पर कोई भी उंगली उठा सकता है ।

आपने इसी सन्दर्भ में लिखा है कि 'मारकोनी के बेतार के उपकरण का उपहास करने वाले कहते थे कि बेतार के उपकरण से वार्तालाप कैसे संभव है, किन्तु आज जब सब कुछ प्रत्यक्ष है तो वे मूर्ख खामोश हैं ।'

आपने यह नहीं लिखा कि वे मूर्ख कौन हैं । यदि आपको यह भ्रम हो कि वे आर्यसमाज के लोग होंगे तो इस विषय में हमारा वक्तव्य यह है कि

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में पूरा एक अध्याय ही महर्षि दयानन्द ने तार विद्या पर लिखा है ।

यह पुस्तक महर्षि दयानन्द ने वि० सं० १९३३ में लिखी थी । अर्थात् ११६ वर्ष पूर्व। इसका १७ वां अध्याय तारविद्या को ही समर्पित है जिसमें उन्होंने ऋग्वेद १/८/२१/५ की साक्षी से इसे प्रमाणित किया है । इसी सन्दर्भ में दृष्टव्य है कि शुक्रनीति में अतिप्राचीन काल में दूरसंवाद संचार प्रणाली का उल्लेख होने से इस विषय को स्पष्ट समझ सकते हैं।जो लोग इन ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं वे आपकी उस सीमा रेखा में नहीं आते हैं जिसका आपने उल्लेख किया है ।

परमेश्वर के अवतार लेने की बात हर प्रकार से अप्रामाणिक है । अवतार की बात पुराणों में ही आती है । कहा जाता है कि समस्त पुराणों के रचयिता वेद व्यास हैं । किन्तु इनके अध्ययन से पता चलता है कि यह बात असिद्ध है । एक ही अवतार को लेकर प्रत्येक पुराण में अलग–अलग कहानी गढ़ी गई है । अब किस पुराण की बात सच मानी जाये । इन अवतारों के विषय में जो घोषणा की गई है वह क्या पूरी हो चुकी है? न तो पापी कम हुए और न ही धर्म का साम्राज्य स्थापित हुआ । जब सत्ययुग में जैसा कि कहा जाता है कि धर्म अधिक था ४ अवतार माने जाते हैं, त्रेता में तीन वह भी एक ही समय, द्वापर में दो, और कलयुग में जब धर्म के नाम पर अधर्म ही पनप रहा है केवल १ अवतार, ऐसा क्यों ?

आपके अनुसार परमेश्वर के अवतार के समझने की बुद्धि दुर्भाग्य से परमात्मा ने हमें नहीं दी।यह वाक्य आपने विचार कर नहीं लिखा क्योंकि इसमें हमारा कोई दुर्भाग्य नहीं है।यह गलती तो आपने परमात्मा पर आरोपित की है अतः इसका भागी तो वही है । हम परमात्मा से कुछ छीन कर तो ले नहीं सकते । जब आपने ही निर्णय ले लिया कि बुद्धि परमात्मा ने ही हमें नहीं दी तो इसमें हमारा क्या दोष है ?

अब हमारा प्रलाप अनर्गल है और आप जैसे बुद्धिमान और चिन्तावान लोगों पर इसका असर पड़ने वाला नहीं तो यह आपके पत्र से ही जाहिर है हमारी पुस्तक की कोई न कोई प्रतिक्रिया आप पर अवश्य ही हुई है जिस कारण से आपने हमें पत्र लिखने का कष्ट उठाया ।

लगता है आप ने इस बात पर कभी भी विचार नहीं किया कि भारत में ही आपकी विचारधारा वाले लोग हैं जो अवतार वाद के समर्थक हैं । समूचे विश्व का कितना बड़ा भाग आपकी विचारधारा से सहमत नहीं है तो क्या आप उनके लिए भी परमात्मा को दोषी नहीं ठहरायेंगे। हम तो अवतार की कथाओं

से भली भाँति परिचित हैं किन्तु उनके लिए आप क्या कहेंगे जिन्हें परमात्मा ने आपके तथाकथित धर्म का विरोधी बनाया हुआ है । उन्हें किसने उत्पन्न किया । अगर आप कहें कि उनका परमात्मा और है तो आपका कल्पित परमात्मा उनसे छोटा बैठता है क्योंकि उनकी संख्या बहुत अधिक बैठती है । आपने आगे लिखा है "आप कबसे चीखते चले आ रहे हैं, कहीं कुछ नहीं बदला"। यदि आपका आशय आर्य समाज के चीखने से है तो आप अपने चारों ओर निगाह उठाकर देखें कि आर्य समाज के द्वारा आरम्भ किये गये सभी कार्यक्रम या तो सरकारों द्वारा अपना लिए गये हैं या अन्य संगठन इन कार्यों को अपनाये हुए हैं यथा अछूतोद्धार, जाति पाँति का उन्मूलन, नारी शिक्षा, वर्णाश्रम व्यवस्था, वेद का प्रचार, शुद्धि आन्दोलन, विधवाओं का पुनर्विवाह, गोरक्षा आन्दोलन, गुरुकुल प्रणाली का पुनर्चलन, अनाथालयों की स्थापना, हिन्दी प्रचार ।

स्वराज शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग महर्षि ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में किया था। और 'आर्याभिविनय' में प्रभु से प्रार्थना की– हे महाराजाधिराज पार ब्रह्म परमेश्वर हम लोगों को यथावत् पुष्ट कर, अन्य देशीय राजे हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग कभी पराधीन न हों ।

आगे आपने लिखा है– "अरअसल यह हिन्दुस्तान का परम दुर्भाग्य ही रहा कि यहाँ दयानन्द जैसा आदमी जन्मा । खैर–फिर भी कुछ नहीं बिगड़ा और न बिगड़ेगा ।"

आपने यह भी बिना विचारे ही लिख दिया । क्योंकि भारत में जन्म लेना न तो दयानन्द के हाथ में था और न ही इसमें भारत कुछ दखल रखता है । हम तो यह कार्य परमात्मा का ही मानते हैं । आप पता नहीं क्या समझते हैं । आपने परमात्मा को सलाह देने का नेक काम नहीं किया कि दयानन्द को भारत में न आने दो । आपके न चाहते हुए भी दयानन्द ने भारत में जन्म ले ही लिया और अपना कार्य करके वे चले गये । लगता है आपको उनके आने से काफी क्षति हुई है । सम्भवतः आर्थिक क्षति अधिक हुई है । हाँ, यदि आप चाहते हैं कि हिन्दुस्तान का सौभाग्य लौट आये तो आप दयानन्द के किये कार्यों को मिटाना शुरू कर दीजिये ।

१. वेदों का प्रचार बन्द करवा दीजिए । २. नारी शिक्षा के सभी संस्थान बन्द करा दीजिए । ३. अछूतों के साथ वही व्यवहार चालू करा दीजिए जो दयानन्द से पूर्व होता है । ४. दयानन्द ने समस्त पाखण्डों का उन्मूलन करने के लिए पाखण्ड खण्डनी पताका फहरायी थी । आप पाखण्डमण्डनी पताका लगायें । ५. अनाथालय समाप्त करा दीजिए । ६. शुद्धि आन्दोलन को समाप्त करा दीजिए, जो लोग ईसाई, मुसलमान मत छोड़कर वैदिक धर्मी हो गये

हैं उन्हें फिर ईसाई और मुसलमान बना दीजिए । विधवाओं का विवाह न होने दें और बाल–विवाह का फिर से प्रचलन करादें । ६. दयानन्द ने अनेक प्राचीन ग्रन्थों में मिलावट होने के कारण उन्हें त्याज्य बताया था, आप फिर से उन ग्रन्थों में मिलावट कराकर प्रचार आरम्भ कर दें । दयानन्द ने आर्य समाज का गठन किया, आप अनार्य समाज की रचना करें । ऐसे ही कितने कार्य दयानन्द ने किये उन्हें उलटे बिना आपके सपनों का हिन्दुस्तान नहीं बन सकता ।

आगे आपने आर्य समाज को मरणासन्न लिखा है और उसके वैसा ही रहने की निश्चितता बताई है । इसमें हम आपकी कोई सहायता नहीं कर सकते। जिसको जितना देखने की सीमा होती है वह उतना ही देख सकता है । आर्य समाज मरणासन्न है या नहीं यह तो आर्य समाज स्वयं ही अच्छी तरह जानता है ।

अब बात मीरा के पद की आती है जो आपको किसी आर्य समाज मन्दिर में नहीं गाने दिया गया जिसके कारण आप समस्त आर्य समाज से कुपित हैं । यह घटना परोक्ष की होने के कारण हम कुछ भी टीका टिप्पणी नहीं करना चाहते । पता नहीं क्या परिस्थिति रही होगी । एक ही पक्ष को सुनकर कोई राय कायम नहीं की जा सकती ।

उदारता को आपने मनुष्य होने की पहली पहचान बताया है तभी तो आपने बड़ी उदारता ? से हमसे परिचित न होते हुए भी उपाधियाँ प्रदान करने का स्तुत्य कार्य किया । होली की शुभ कामनाओं के लिए धन्यवाद, आप के लिखे अनुसार हमने पत्र का उत्तर दे दिया है । अब आपका दायित्व है कि आप पत्रकार होते हुए हमारे इस पत्र को अपने उत्तर सहित अपने पत्र में स्थान दें जिसे आप अपनी सेवा से सुशोभित कर रहे हैं ।

भवदीय

स. कुमार

उपसंहार

पाठक वृन्द ! "शिव कौन हैं ?" उसकी प्रतिक्रिया और उसका उत्तर आपके समक्ष प्रस्तुत हैं। निर्णय आपको ही करना है कि आप कौन से शिव को चाहते हैं। हमारा आशय तो यही है कि यथार्थ की पृष्ठभूमि पर उतर कर सत्य का स्वीकार करना ही अधिक समीचीन है। हमने इस निबन्ध में शिव का मूल बेदों में पाया और ज्ञात हुआ कि वेद का शिव परमात्मा का एक नाम है जो कल्याणकारी है। आदि सृष्टि में वेद के अन्तर्गत अनेक नामों से परमात्मा का स्मरण किया गया है। मानव सृष्टि के विस्तार के साथ–साथ मानवों के नाम भी वेद में आये नामों के आधार पर रखे गये और यह परम्परा आज तक चली आ रही है। स्पष्ट है कि आज कोई व्यक्ति शिव नामधारी हो तो उसका वर्णन वेदों में मानना उचित नहीं है। ऐसा ही महाभारत कालीन पर्वतीय राजा शिव के साथ समझना चाहिए।

कालान्तर में हिमालय पर्वत की कल्पना मुनष्यवत् करने पर जो चित्र बनता है उसे भी इस पर्वतीय शासक के जीवन चरित्र के साथ जोड़ा गया और वाम मार्ग ने इसमें लिंग पूजा का समावेश कराकर इसे वर्तमान स्थिति में पहुँचा दिया।

साधारण जन तो गतानुगतिक रीति का अनुसरण करते हैं उन्हें जो धर्म के नाम पर बताया जाता है, स्वीकार कर लेते हैं। जब यह परम्परा रूढ़ हो जाती है तो इससे विमुख होना कठिन हो जाता है। आवश्यकता इसी बात की है कि यथार्थ को स्वीकार कर ऐसी गलत परम्परा को यथाशीघ्र बहिष्कृत कर देना चाहिए।

उपासना करने योग्य तो वही परमात्मा है जो इस संसार का रचयिता, पालन कर्ता और संहर्ता है। उसके गुणों का पार नहीं है। वेद में उसी परमात्मा को शिव नाम से भी उल्लिखित किया गया है।

सांसारिक अवगुणों से युक्त व्यक्ति परमात्मा हो ही नहीं सकता। लोक कथाओं और पुराणों का शिव संसार के सभी दुर्गुणों से युक्त है अतः वह हमारा आदर्श होने योग्य नहीं है। उसकी लोकप्रियता का कारण भी यही है कि उसके चरित्र के साथ जिसने जैसा चाहा अपना सम्बन्ध जोड़ लिया। यहाँ तक कि भाँग, गाँजा, अफीम, चरस आदि मादक पदार्थों का सेवन करने वाले व्यक्ति भी अपने को शिव भक्त बताकर उसे अपने जैसा ही वर्णित करते हैं। वाममार्ग का समर्थन भी शिव कथाओं से होता है। ऐसे चरित्रों की कथाऐं हमारा मनोरंजन भले ही करती हों, हमें परमात्मा की ओर नहीं ले जा सकती।

परमात्मा की प्राप्ति के लिए तो वेद वर्णित शिव का ही आश्रय लेना उचित है।